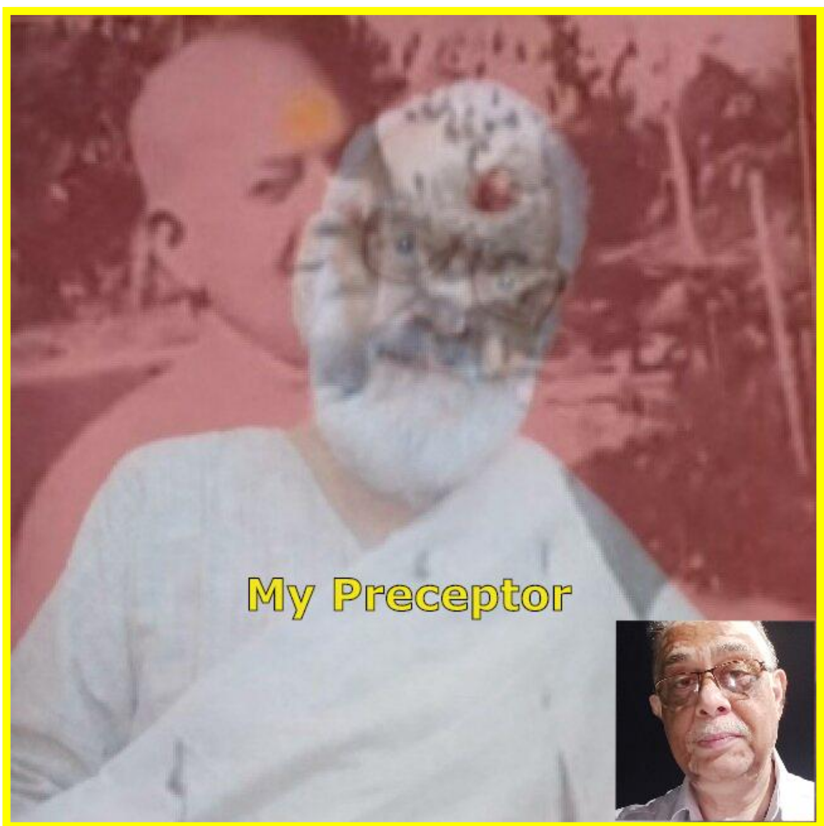


“तुम और मैं”

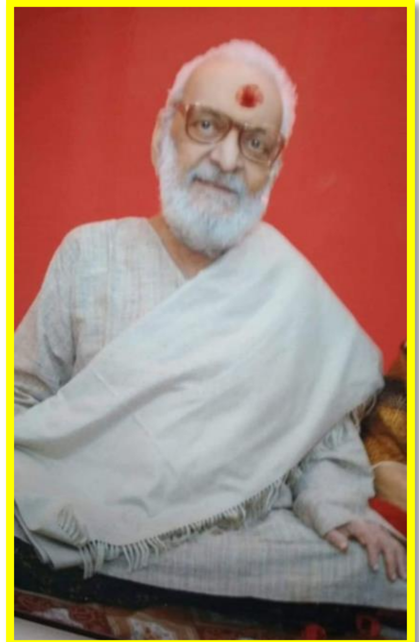
गुरु शिष्य मिलन कथा

संकलन एवं संपादन

प्यारेलाल खेर

गुरु शिष्य मिलन कथा





१. बाबा देवीशंकरजी २. गुरुदेव हरिविलासजी आसोपा (आपसा)

३. माँ प्रभा देवीजी, हरिहर त्रिक आश्रम में २०११



गुरु शिष्य मिलन कथा

“तुम और मैं”

गुरु शिष्य रिश्ते की दिव्य कथा

संकलन एवं संपादन

प्यारेलाल खेर

हरिहर त्रिक संस्थान प्रकाशन

महेश्वर म. प्र.

गुरु शिष्य मिलन कथा

हरिहर त्रिक आश्रम मध्यप्रदेश के महेश्वर नगर में स्थित है। गुरुदेव हरिविलासजी आसोपा की सदेच्छा के अनुरूप यहाँ पिछले दस वर्षों से प्रति गुरुवार काश्मीर शैव दर्शन पर सत्संग होता है। यहाँ की सुविधाएँ निःशुल्क तथा सर्वसुलभ हैं। आश्रम में कश्मीर शैव दर्शन (त्रिक दर्शन अथवा अद्वैत शैव दर्शन) को सामान्य बोलचाल की भाषा में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझाने का प्रयास किया जाता है। यह दर्शन ज्ञान का शिखर है। यह मनुष्य के पारमार्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के साथ ही उसे एक स्थिरचित्त विश्व नागरिक बना देता है।

आश्रम की व्यवस्था 'विश्वात्मा न्यास' के अंतर्गत चलती है। अधिक जानकारी के लिये आप न्यास के निम्न पदाधिकारियों से संपर्क कर सकते हैं।

श्री अजय जोशी सचिव, मोबाइल ९४२५३३४१७४

श्री चन्द्रभूषण महाजन, मोबाइल ८८७८८५५११०

कार्तिक पूर्णिमा, ३० नवम्बर २०२०

प्रकाशक - हरिहर त्रिक संस्थान प्रकाशन
८३, पंचवटी कॉलोनी
महेश्वर, मध्यप्रदेश ४५१२२४

सहयोग राशि 30/-

PREFACE

गुरुर ब्रह्मा गुरुर विष्णु गुरुर देवो महेश्वर:
गुरु: साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नम:

According to our tradition when we are ready the Guru will appear, this is one of the greatest secret treasures of our culture. This is the unbroken lineage passed from Master to Disciple. Guru cannot be selected by choice like we do in school days to select a teacher for material knowledge. Also Guru can not be selected by chance. Guru Shishya Milan is a relation of many births which is proved in this book. This book includes two stories of GURU SHISHYA MILAN. First story is about **Dada Gurudev Baba Devishankar Chattopadhyay** and his disciple **Harivilasji Aasopa** and the second story is about **Gurudev Shree Sahajanand Nath Harivilasji Aasopa** and his disciple **Dr. Mohan Lal Gupta**. The story was told to few audiences by Dr. Mohan Lal Gupta at Harihar Trik Ashram. The audio of these two Guru Shishya Milan Kathas was published on 18-11-2019 and is available in audio format at this link: - https://archive.org/details/Mypreceptor I have tried to give this audio lecture the form of a book.

BawraSharanam

Piaraylal Kher, Katra (J & K)
Mob: - 7006216877

गुरु शिष्य मिलन कथा

Please read this before you go to the main text.

The first part of story is told as I heard from my Gurudev and believed to be true. Second part is my own experience. Before you come down to absolute, the truth is a large collection of beliefs. The reader has all the liberty to accept or reject the facts. What is more important is the divine way in which this predestined relation is re-established.

This booklet is dedicated to the Sweet memories of my spiritual preceptor Revered **Shree Harivilasji Aasopa (Beloved Aapsa) & Ma Pushpa Aasopa, loving spiritual mother.**

Thanks to **Shree Piaray Lal Kher of Katra J & K**, though residing far away from Harihar Trik Ashram, he is a regular listener of Ashram lectures and a sincere follower of Trika System. Also my thanks are due to **Shree Manoj Khomane of Kolhapur Maharashtra** who came to Harihar Trik Ashram last year, driving a long distance. He was eager to listen about my preceptor. In response to his desire this story was told to him. Lastly I thank to all those attending the lectures at Harihar Trik Ashram as their presence is the real stimulus for lectures on Trik Darshan in Ashram.

At the end I have shared a letter from my preceptor, written to me few weeks after my spititual initiation. The letter is a *vers*

libre. For last 21 years this letter is my precious treasure and greatest inspiration to move on. I did not share this letter over this long time considering it intensely personal. But now the pressure is building up inside me and is unbearable. I share it with one intention only that all of you may know – **"How much love a preceptor may shower upon his disciple".**

Dr. Mohan Lal Gupta Maheshwar, November 2020

पुस्तक पढ़ने के पहले कृपया इसे अवश्य पढ़ें: -

इस पुस्तिका में कही गयी बाबा की कथा वही है जैसी मैंने अपने गुरुदेव से सुनी और मेरे विश्वास की कसौटी पर सत्य है। निरपेक्ष सत्य से इतर समस्त सत्य मान्यताओं और विश्वासों के संग्रह हैं। पाठक को स्वतंत्रता है कि इसमें कहे गये तथ्यों को स्वीकारे अथवा न स्वीकारे, अधिक महत्वपूर्ण है गुरु शिष्य के पूर्वनिर्धारित रिश्ते की पुनर्स्थापना की दिव्यता।

यह छोटी सी पुस्तिका मैं अपने पूज्य गुरुदेव श्री हरिविलासजी आसोपा (प्यारे आपसा) तथा ममतामयी माँ पुष्पा आसोपा की प्रिय स्मृतियों को समर्पित करता हूँ।

श्री प्यारेलालजी खेर कटरा (जम्मू काश्मीर) को धन्यवाद, हजारों किलोमीटर दूर रह कर भी वे हरिहर त्रिक आश्रम के व्याख्यानों के नियमित श्रोता तथा समर्पित साधक भी हैं। श्री प्यारेलालजी ने आश्रम में संपन्न एक वक्तव्य को पुस्तिका का रूप दे कर हम सब पर उपकार किया है। मैं कोल्हापुर महाराष्ट्र से आश्रम में आये जिज्ञासु साधक श्री मनोज खोमाने और उनकी धर्मपत्नी को भी धन्यवाद देता हूँ जिनकी जिज्ञासा के उत्तर में ही यह कथा उनके समक्ष कही गयी थी। अंत में उन सभी आश्रम में आगंतुक साधकों को मेरा हृदय से धन्यवाद, उनकी उपस्थिति और रुचि ही आश्रम के व्याख्यानों की सच्ची रचनाकार है।

गुरु शिष्य मिलन कथा

पुस्तिका के अंत में मैंने मेरे गुरुदेव का एक पत्र साझा किया है जो उन्होंने मेरी दीक्षा के कुछ सप्ताहों बाद लिखा था। यह पत्र एक मुक्त छंद के रूप में है। वर्षों से यह पत्र मेरी प्रेरणा का प्रबल स्रोत रहा है। इसे अतिव्यक्तिगत जान कर मैंने इसे अपने तक सीमित रखा था लेकिन अब मन में तीव्र अभिलाषा है कि इसे आप पाठकों तक पहुँचा दूँ ताकि आप सब भी गुरुदेव के प्रेम में भीग सकें।

डॉ. मोहन लाल गुप्ता,
८३ पंचवटी कॉलोनी महेश्वर, मध्यप्रदेश
नवम्बर २०२०



हरिहर त्रिक आश्रम में सत्संग २०१४

गुरु शिष्य मिलन कथा

प्रथम कथा

बाबा देवीशंकर जी चट्टोपाध्याय परशिवानंदनाथ जी

फकीराग्राम में हमारे बाबा का जन्म हुआ था, यह जन्म स्थान वर्तमान असम राज्य में है। वे सिविल सर्विसेज में थे। उनका एक लड़का था जो अविवाहित था, घर में पत्नी थी। जितना मैं जानता हूँ वह बता रहा हूँ, जैसा मेरे गुरुदेव ने उनके बारे में बताया था। वह एक बार दुर्गा सप्तशती पढ़ रहे थे और पढ़ते-पढ़ते उनको एकाएक वैराग्य हो गया, उनको लगा कि मैं अब इस घर में नहीं रह सकता। वे घर से निकल पड़े। घर से निकलने से पहले इतना बोल कर गये थे कि मैं नर्मदा के किनारे तपस्या करूँगा। दुर्गासप्तशती में लिखा था कि राजा सुरथ और समाधि वैश्य, इन्होंने तीन वर्षों तक नदी किनारे देवीसूक्त का जाप किया और स्वरक्त की आहुति देते हुए तपस्या की। प्रसन्न हो कर देवी ने उन्हें साक्षात दर्शन दिए। देवी ने राजा सुरथ को उसका खोया हुआ राज्य दिया और जो समाधि वैश्य था उसको, क्योंकि उसको वैराग्य हो गया था, मुक्ति दी। जो मन में इच्छा थी वह मिली, जैसे समाधि वैश्य को इच्छा थी मुक्ति की तो उसको मुक्ति मिली, जिसकी इच्छा राजपाट वापस मिलने की थी उनको राजपाट मिल गया। यह पढ़ने के बाद उन्होंने निर्णय लिया कि मैं भी अब जाऊँगा और तपस्या से अपनी माँ को प्रसन्न करने की कोशिश करूँगा। मध्यप्रदेश में नेमावर नाम की जगह है जहाँ नर्मदा की नाभि (केंद्र) है, वे वहाँ पर गये। बाबा को “स्वरक्त की आहुति” का मतलब अंतर्प्रज्ञा से समझ आया। स्वरक्त की आहुति का मतलब

होता है कि मैं भिक्षा नहीं माँगूँगा, बस मात्र आराधना करूँगा, अगर माँ की इच्छा होगी जीवन रक्षा करने की तो कोई भी बिन माँगे आकर खाना खिला देगा और अगर नहीं खिलायेगा तो मैं नहीं खाऊँगा और जब नहीं खाऊँगा तो स्वरक्त की आहुति लगेगी। इस तरह से उन्होंने तय किया और नेमावर में नर्मदा किनारे आकर अपनी आराधना आरंभ की। तीन वर्षों का संकल्प लिया। वे संध्या को नर्मदा जी की आरती करते थे और सतत देवीसूक्त का जाप करते थे, "या देवीसर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः"। कभी कोई आ कर भोजन दे जाता था तो कभी कभी कई दिनों तक नर्मदा का जल पी कर आराधना करते रहते थे। जब एक वर्ष पूर्ण हुआ तो गाँव के लोग ढूँढते हुए आये। नर्मदा के किनारे कहीं तो मिलेंगे, मिल भी गये, उन्होंने खबर दी कि बीमारी में तुम्हारी पत्नी की मृत्यु हो गयी है, उनको एक चिट्ठी दी गयी जो उनके लड़के ने लिखी थी, "बाबूजी, अब आप वापस घर आ जाओ, माँ नहीं रही"। बाबा ने उन लोगों को बोला "तुम जाओ मैं तो घर नहीं आऊँगा, लड़के को बोलो कि वही संभाले, जो भी है खेती-बाड़ी मकान"। वे लोग चले गये। बाबा पुनः अपनी तपस्या में लीन हो गये। अब एक साल और बीता। जब दो साल हो गये, गाँव के लोग फिर आये बोले "एक मोटरसाइकल की दुर्घटना हो गयी और उसमें आपके लड़के की मृत्यु हो गयी, अब तो आप चलो। मकान, खेती-बाड़ी कौन संभालेगा"? तो बाबा बोले "आप सब लोग संभालो, आपको जो करना है करो, मैं कभी भी नहीं आऊँगा, पहले तो यह था कि शायद लड़के के लिये आना पड़े लेकिन अब मैं कभी नहीं आऊँगा। माँ ने मेरे मोह के सारे बंधन तोड़ दिए, तुम लोग जाओ मुझे अब गाँव में कभी नहीं आना"। वे लोग चले गये और बाबा वहीं आराधना करते रहे। यह बात उन्होंने मेरे गुरुदेव को बताई थी। मेरे गुरुदेव उनके सबसे ज्यादा प्रिय शिष्य थे। तीन वर्ष जिस दिन पूरे हुए उस संध्या के बारे में बाबा ने गुरुदेव को बताया "मैं संध्या को नर्मदा मैया की आरती कर रहा था, उसी समय सामने इतना तेज प्रकाश हुआ कि आँखें

खुल नहीं रही थीं। कुछ देर बाद प्रकाश कम पड़ा और माँ सामने खड़ी दिखाई देने लगी, साक्षात माँ दुर्गा दिखाई दीं और उनके आसपास उनकी सहचरियाँ हाथों में सोने के थाल लिये खड़ी थीं जिनमें खूब सारी धन दौलत थी"। बाबा ने प्रार्थना की और दंडवत प्रणाम किया, माँ को प्रार्थनापूर्वक कहा "माँ यह वैभव समेट लो, मुझे यह वैभव नहीं चाहिये"। माँ ने पूछा "तुझे क्या चाहिये"? तो उन्होंने बोला "मुझे आपका अनुग्रह चाहिये और कुछ नहीं चाहिये" माँ ने आशीर्वाद दिया और वह दृश्य विलीन हो गया। इसके बाद उन्होंने नेमावर नगर सदैव के लिये छोड़ दिया। उन्होंने अनुभव किया कि वे जो चाहते थे वह उनको मिलने लगा। जैसे उन्हें कभी इच्छा हुई कि मुझे दूध पीना है तो कोई भी आकर दूध दे देता था, कभी कहीं जाने की इच्छा होती थी तो कोई आकर बोलता था बाबा चलो हम वहाँ जा रहे हैं आपको ले चलते हैं। किसी के बारे में सोचते तो वह व्यक्ति कहाँ है, क्या कर रहा है यह दिखाई देने लगता था, उन्हें सिद्धियाँ मिल गयी थीं। उनको कुछ भी नहीं करना पड़ता था। उनको लगा कि अगर मैं इन सिद्धियों के चक्कर में पड़ गया तो मेरा जीवन नष्ट हो जायेगा। उन्होंने इन सिद्धियों का उपयोग करना बंद कर दिया और भिक्षावृत्ति करने लगे। यह कथा हमारे पूज्य दादागुरु बाबा देवीशंकर चट्टोपाध्याय की है।

गुरुदेव हरिविलासजी आसोपा का आरंभिक जीवन

अब मेरे गुरुदेव के बारे में बता रहा हूँ। जो मेरे गुरुदेव हैं उन्होंने अभी दो वर्ष पहले १८ अक्टूबर २०१७ को शरीर छोड़ा, वे एक धनी परिवार में पैदा हुए थे। मेरे गुरुदेव का नाम है श्री हरिविलासजी आसोपा और इनके पिताजी थे सेठ पन्नालालजी। वे बहुत बड़े सेठ थे। वे उस जमाने में, याने आज से लगभग ७०-८० साल पहले, लाखों का व्यापार किया करते थे। आज इसको आप अरबों का कह सकते हो। जैसे मिलिट्री को तेल सप्लाई करना है, वे इस तरह के ठेके लेते थे। उनकी दुकान का १५० फिट का तो फ्रंट था, लगभग एक सौ कर्मचारी

थे, बहुत बड़ा व्यापार था। पन्नालाल सेठ की संतानों में लड़कियां थीं लेकिन लड़का नहीं था और उनकी पत्नी की मृत्यु हो गयी। वे प्रतिदिन नंगे पैर शिव मंदिर जाते थे, वहाँ पर जाकर दर्शन करते थे और किसी भी एक संत को लाते थे, चरण धोते थे और उनको भोजन कराते थे, यह उनका नित्य नियम था। इसके बाद वे दुकान पर जाते थे। मंदिर के रास्ते में एक पेड़ के नीचे एक बाबा बैठते थे जो रोजाना बेलन से पेड़ों के पत्ते पीस कर खाते रहते थे, लोग उन्हें पत्तेवाले बाबा कहते थे। पत्तेवाले बाबा ने एक दिन सेठ पन्नालाल को रोका और बोले "पन्नालाल इधर आ, तेरी घरवाली मर गयी है"? सेठ बोले "हाँ", "तो फिर से शादी कर ले" सेठ बोले "बाबा अब मैं ४० साल का हो गया हूँ, शादी नहीं करूँगा"। बाबा फिर से बोले "तुझे शादी तो करना पड़ेगी" "क्यों करना पड़ेगी? मैं अब इस लफड़े में नहीं पड़ूँगा" सेठ ने विरोध किया। "मेरी बात का विश्वास नहीं है?" "बाबा मुझे विश्वास है पर मैं शादी नहीं करूँगा"। "अच्छा कहाँ जा रहा है?" बोले "मंदिर जा रहा हूँ" "चल यह मेरा बेलन है इस बेलन को मंदिर में अर्पण कर देना" बोले "ठीक है कर दूँगा" वह गये और बेलन को मंदिर में अर्पण किया। मंदिर लगभग डेढ़ किलोमीटर दूर था। फिर वे नंगे पैर वापस आये। बाबा ने पूछा "बेलन अर्पण कर दिया?" बोले "हाँ कर दिया" तो बाबा ने कहा "देख वह वापस आ रहा है"! बेलन उड़ते हुए वापस बाबा के पास ही आ गया। "बाबा आप तो चमत्कार कर रहे हैं" बाबा ने बोला "मैं चमत्कार नहीं करता हूँ पर बेटा तुझे मेरी बात का विश्वास नहीं है इसलिये चमत्कार दिखाना पड़ा। तेरे घर एक विशिष्ट बच्चे का जन्म होने वाला है इसलिये तुझे शादी करना पड़ेगी"। सेठ बोले "बाबा आप पीछे पड़े हो तो मैं शादी करने के लिये तैयार हूँ"। पैसा बहुत था, प्रतिष्ठा थी, शादी के लिये कोई समस्या नहीं थी। उनको समाज की लड़की भी मिल गयी और उन्होंने शादी कर ली। दूसरी पत्नी से हमारे गुरुदेव का जन्म हुआ। इनका जन्म हुआ अपने ननिहाल चुरु राजस्थान में, श्राद्धपक्ष के नवें दिन, तारीख थी ९ अक्टूबर १९३६, पत्तेवाले बाबा ने नाम रखा "हरिविलास"।

गुरु शिष्य मिलन कथा

जब बालक हरिविलास दो-तीन साल की उम्र का था तो अक्सर एक पत्थर सामने रख लेता था और उसे हाथ जोड़ता रहता। हमेशा ऐसा ही करता था। माँ के साथ मंदिर जाता था। लौट कर एक पत्थर उठा उस पर माथा पटकता रहता था, दिन भर हाथ जोड़ता रहता था। बस भगवान् की मूर्ति देखी तो हाथ जोड़ता रहता था। जब संध्या को बालक हरिविलास की माता इंदिरा देवी घर के पंढेरे पर दीपक जला कर पितरों से प्रार्थना करती थी तब उसी समय बालक हरिविलास जहाँ कहीं भी हो दौड़ कर आता और बोलता “माँ तूने मुझे पुकारा”? और माता कहती थी कि यह कोई पितर है जो मेरे घर पैदा हुआ है। एक दिन सेठ पन्नालाल जी पत्तेवाले बाबा के पास गये और बोले बाबा तूने लड़का तो दिया पर इतना बड़ा यह जो कारोबार है कौन संभालेगा? यह बच्चा तो मुझे आपके जैसा सन्यासी प्रतीत होता है। तो उन्होंने बोला “ठीक है आज से उसका दिमाग फेर देता हूँ। अब इसको दुनियादार बना देता हूँ”। तो सेठ बोले “हाँ मुझे तो ऐसा ही बच्चा चाहिये। इकलौता लड़का दिया आपने, उसकी सिर्फ बहनें ही हैं कारोबार कौन संभालेगा। यह बच्चा कारोबार संभाल ले ऐसी व्यवस्था कर दो”। उसी दिन शाम को माँ ने कहा “चलो मंदिर चलते हैं” तो बालक बोला, “नहीं जाऊँगा”, बोला “ये भगवान् हैं, हाथ जोड़ो” बोला “नहीं जोड़ूँगा!” जरा सा तीन साल का बच्चा उसका दिमाग एकदम बदल गया था। अब जब कभी भी मंदिर की बात आती थी कहता “नहीं जाना”, जबरदस्ती गोदी में भी ले जाओ तो मंदिर की सीढ़ी पर मंदिर की ओर पीठ करके बैठ जाता था। मुझे नहीं देखना मंदिर। दिमाग पूरी तरह उलट गया था। जब बालक हरिविलास थोड़ा बड़ा हुआ तब पिता को लगा कि इस लड़के के लक्षण अच्छे नहीं हैं, यह बिगड़ जाएगा, इसको हम हॉस्टल में रख देते हैं, घर में तो इसको देखने के लिये समय है नहीं हमारे पास। ग्वालियर में एक प्रसिद्ध सिंधिया स्कूल है, उस जमाने में, १९४२ के करीब, स्कूल की मासिक फीस ५०० रुपये होती थी। उनके पास पैसों की कोई कमी नहीं थी। वहाँ पर धनवानों और राजा रजवाड़े

के बच्चे ही पढ़ते थे, वहाँ पर उसे भर्ती करा दिया गया। बालक हरिविलास वहाँ पर पढ़ने लगा। वहाँ अंग्रेज शिक्षक थे, विश्व स्तर के साहित्य से उसका परिचय हुआ। हरिविलास की सम्पूर्ण स्कूल की शिक्षा सिंधिया हाई स्कूल में हुई।

किशोरवय हरिविलास का विवाह

बालक हरिविलास १६ वर्ष का हुआ तो एक दिन पिता सेठ पन्नालाल ने देखा कि लड़के की डायरी में कविताएँ लिखी हुई हैं। बड़ी छायावादी कविताएँ लिखी थीं, पिता ने कविताओं से भरी डायरी जलते चूल्हे में डाल दी। लड़का अब बिगड़ने लगा है उन्होंने सोचा, मैं इसकी शादी कर देता हूँ। समाज के किसी वरिष्ठ ने बताया कि राजस्थान में अजमेर के आगे एक गाँव है, वहाँ एक परिवार है, जहाँ एक अच्छी लड़की है, उसे आप देख कर आओ। सेठ ने लड़के की जन्म-पत्रिका जेब में रखी और निकल गये। रेल अजमेर पहुँची, जहाँ से कुछ दूर आगे उनको जाना था, लेकिन शाम हो गयी थी, जाने का कोई साधन नहीं मिला तो उन्होंने सोचा कि कल जाऊँगा, कोई ब्राह्मण परिवार आस-पास हो तो वहाँ रात रुक सकता हूँ। उन दिनों ठहरने को होटल बहुत कम हुआ करते थे, लोग अक्सर अपने समाज के किसी परिवार को ढूँढ कर वहाँ रात बिताते थे अथवा किसी सराय में रुकते थे। पता लगा कि पास के एक मोहल्ले में ब्राह्मणों के परिवार रहते हैं, वे उस मोहल्ले में गये तो बाहर एक छोटी सी लड़की ओटले पर बैठी पैर हिला रही थी। उस लड़की को पूछा बेटा तुम ब्राह्मण हो? वह बोली “हाँ”, तो पन्नालालजी बोले “तुम्हारे पिताजी को बुलाओ” लड़की अंदर गयी और बोली “पिताजी बाहर कोई बुला रहा है” वे बाहर आये और आगंतुक से पूछा “तुम ब्राह्मण हो”? सेठ ने कहा “हाँ” उन्होंने स्वयं का परिचय दिया “मैं भी ब्राह्मण हूँ, मुझे मेरे बेटे के लिए लड़की देखने आगे जाना है, आज रात रुकना है” तो उन्होंने बोला “पधारो”। सेठ अंदर आये, गृहस्वामी ने कहा “भोजन बनवाते हैं, भोजन ले कर आराम करें”। सेठ ने कहा “भोजन तो कर लेंगे लेकिन

गुरु शिष्य मिलन कथा

जो लड़की बाहर बैठी थी वह किसकी लड़की है, क्या नाम है"? ब्राह्मण बोले "मेरी लड़की है, पुष्पा नाम है"। "कितनी उम्र है इसकी?" बोले "१३ साल की है" "हमको दोगे क्या?" पन्नालालजी ने अपना परिचय दिया और कहा "मैं विदिशा का सेठ पन्नालाल हूँ"। वे जानते थे बोले "हमने आपका नाम सुना है, बहुत पैसे वाले हैं आप, मैं तो साधारण आदमी हूँ, मेरी लड़की आप कहाँ ले जाओगे"? "यह बात छोड़ो, आप हमें हाँ या ना में जवाब दो। मैंने इस लड़की के लक्षण देख लिये हैं, हमको पसंद है" तो बोले "साहब आपको कैसे मना कर सकते हैं, मैंने लड़की आपको दी" तो जिस लड़की को देखने जाना था वहाँ तो गये ही नहीं और इसी लड़की से सगाई करके आ गये जो आगे चल कर हमारी गुरुमाता बनीं। घर लौट कर बोले "मैं अजमेर बात पक्की करके आ गया हूँ, इस लड़के की सगाई कर दी"। कुछ दिनों के बाद उन्होंने किशोरवय हरिविलास की शादी कर दी। शादी के बाद में हरिविलास १७ वर्ष का भी पूरा नहीं हुआ था तब पन्नालालजी बोले "तुम काम धंधा संभालो" पर हरिविलास का किसी काम धंधे में मन लगता नहीं था। न कोई पूजा करना, न मंदिर जाना न कभी उपवास रखना न ही कभी किसी तरह का कोई धार्मिक अनुष्ठान करना, कुल मिलाकर बस मस्ती करना बड़े-बड़े अंग्रेजी लिटरेचर पढ़ना, बड़ी-बड़ी पुस्तकें पढ़ना, नॉवेल्स पढ़ना, बस ये ही शौक थे। कविताएं लिखना, साहित्य पढ़ना इसी में समय बीतता था।

पिताजी की मृत्यु और परिणाम..

युवा हरिविलास २२ वर्ष का हो चला था, पिताजी ने सोचा कि मुझे साथ में रखकर इसको धंधा सिखाना पड़ेगा। एक जगह बिजनेस के लिये यात्रा पर जा रहे थे, बोले "तुम मेरे साथ चलो", रेल का टिकट लिया, रेल को आने में कुछ मिनट की देर थी। विदिशा एक जगह है मध्यप्रदेश में, वहीं की बात है, पिता पुत्र ट्रेन के इंतजार में बैठे थे। पिता ने पुत्र की गोद में सिर रखा। हरिविलास को लगा

गुरु शिष्य मिलन कथा

कि पिताजी को शायद नींद आ रही है लेकिन उनका तो प्राणांत हो चुका था। बेफिक्र फक्कड़ किशोर हरिविलास हक्का बक्का रह गया। व्यापार तो कुछ आता ही नहीं था और घर में सौ कर्मचारी, लाखों का लेन देन! हिसाब किताब कुछ समझ में आता नहीं था। अब उन्होंने पिता का दाह संस्कार, क्रिया कर्म किया, उसके बाद दुकान पर बैठे। सोचने लगे मुझे तो कुछ आता ही नहीं अगर मैं ऐसा बोलूंगा कि कुछ नहीं आता तो ये कर्मचारी लोग ही सारा पैसा खा जायेंगे। तो ऐसे ही जबरदस्ती सौदा करने लगे, धंधे की अकल तो थी ही नहीं, उनका चार छः महीनों में पूरा दीवाला निकल गया। मिलीट्री को खाद्य तेल की आपूर्ति का एक बड़ा ठेका ले लिया था, तदन्तर भावों में अत्यधिक वृद्धि हो गयी, उस समय इनको करीब ४० लाख का घाटा हुआ। इनके घर में कम से कम कोठी भर कर सोना था, इतनी ही चांदी थी, १००० बीघा जमीन थी, करीब १०० मकान थे, सब बिक गये, सारा कर्ज चुका दिया। आखिर में कुछ थोड़ा सा पैसा बचा वह लेकर बड़ोदा गुजरात चले गये। फिर वहाँ पर एक सर्विस करी, टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस में प्रूफ्र रीडर का काम करा। अंग्रेजी अच्छी थी, पत्रकारिता सीखी, लेबर यूनियन में नेतागिरी की।

गुरु शिष्य मिलन

एक बार टाइम्स ऑफ इंडिया ने भोपाल भेजा, भोपाल से किसी इवेंट की रिपोर्टिंग करनी थी । भोपाल में शीश महल होटल में ठहरे थे। शाम को एक भोजनालय में खाना खाते थे, कुछ दिनों के लिये वहीं ठहरना था। एक संध्या शाम का खाना खाकर कमरे में आये तब किसी ने दरवाजा खटखटाया। पूछा "कौन है"? "बेटा दरवाजा खोलो" दरवाजा खोला तो देखा एक वृद्ध दरवाजे पर खड़े थे। "बाबा क्या चाहिये" बोले "बेटा भूख लगी है खाना खिला दे"। युवा हरिविलास को भगवान्, पुण्य आदि में कोई विश्वास नहीं था लेकिन इंसान का दर्द भली भांति समझते थे। बोले "बाबा सामने होटल में जा कर खाना खा लो मैं

एक कागज़ पर लिख कर दे देता हूँ आपसे कोई पैसे नहीं माँगेगा, मेरे खाते में लिख लेगा"। हरिविलास उस समय पूरी तरह से लेनिनवादी थे, यानी भगवान् नहीं होता, दुनिया में मात्र मेहनत होती है, किस्मत या पूर्व जन्म से कुछ नहीं होता, हमें सब करना पड़ता है। कोई कर्मफल नहीं होता जो हम करते हैं वही कर्म होता है। उनकी मान्यता थी कि सब को भोजन मिलना चाहिये, सबको बराबरी से संसाधन मिलना चाहिये। बाबा चले गये वहाँ से, आधे घंटे के बाद फिर आ गये। "खाना खा लिया"? बोले "हाँ खा लिया"। "अब क्यों आ गये, घर जाओ"! बाबा ने कहा "मेरा कोई घर नहीं है"। तो बोले "उसमें मैं क्या करूँ"? बोले "मुझे अंदर आने तो दो"। "अंदर आ कर क्या करोगे, मेरे पास कुछ है ही नहीं, मुझे लूट भी नहीं सकते, क्या करोगे अन्दर आ कर?"। "पर बेटा मैं कुछ बड़ा हूँ तुझसे, मुझे अंदर तो आने दे"। तो बोले "ठीक है अंदर आ जाओ, लेकिन मुझे कोई रुचि नहीं है आपसे बातें करने में"। बाबा देवीशंकर चट्टोपाध्याय अंदर आये और जमीन पर बैठने लगे। तो बोले "नहीं नहीं आप पलंग पर बैठें, आप उम्र में बड़े हो, पलंग पर बैठें। वहाँ होटल में एक ही पलंग था, बोले "क्या बात करनी है"? बोले "बेटा अपना तो एक बहुत पुराना रिश्ता है"। "बाबा मेरे साथ फालतू की बातें मत करो हमारा कोई रिश्ता नहीं है"। बाबा ने पूछा "भगवान् को मानते हो"? "नहीं मानता, भगवान् कुछ नहीं होता"। तो बोले "अच्छा एक बात बता दे, अंतिम बात पूछ रहा हूँ, नहीं तो मैं चला जाऊँगा, तेरे शरीर पर जन्मजात शिवलिंग बना हुआ है कि नहीं? हाँ या ना में जवाब दे दे"। हरिविलास का चेहरा एकदम उतर गया, बोले "बाबा यह बात या तो मेरी माँ जानती है या मेरी पत्नी जानती है, आपको कैसे मालूम कि मेरे शरीर पर शिवलिंग बना है?" बोले "बेटा यह तो छोटी सी बात है मैं तुझे तब से जानता हूँ जब तेरा यह जन्म नहीं हुआ था। इसलिये यह बात बता रहा हूँ क्योंकि तुझे मेरी बात का विश्वास नहीं हो रहा। मैं फिर कह रहा हूँ कि हमारा रिश्ता बहुत पुराना है, मैंने तुझको बहुत ढूँढा और ढूँढते ढूँढते यहाँ पर आ गया"। हरिविलास

अब बाबा की बातें सुनने को राजी हो गया। “अब आपने ऐसी बात बोली तो मैं आपकी बात सुनने के लिये राजी हूँ, मैं कोई वादा नहीं करता कि मैं भगवान् को मान लूंगा या ऐसा वैसा कुछ भी कहोगे तो मान लूँगा”। बाबा बोले मैं कहाँ कह रहा हूँ कि तुम मेरी बात मानो, बस जो मैं कहूँ उस बात को सुन लो। उन्होंने अंदर से दरवाजा बंद किया। गुरुदेव बैठे थे और उनके गुरुदेव उन्हें तैयार कर रहे थे। अब उन्होंने जो रात में बताया कि संसार क्या है? मनुष्य क्या है? मनुष्य का जन्म क्या है? कर्म क्या है? ईश्वर को हमें क्यों मानना पड़ता है? ईश्वर का क्या प्रमाण है? न मानने से क्या होता है? मानने से क्या होता है? जीवन में जो विभिन्नतायें हैं, संसार में जो विभिन्नतायें हैं उनका रहस्य क्या है? इस तरह से जब बाबा ने हरिविलास को अध्यात्म का प्रथम पाठ पढ़ाया तो वह शांति से सुनता रहा, दिमाग तो तेज था ही। कुछ घंटों के बाद आँखों से आँसू गिरने लगे और सुबह होते होते ब्रह्म मुहूर्त में युवा हरिविलास ने बाबा के पैर पकड़ लिये। “बाबा मेरा इतना जीवन क्यों व्यर्थ चला गया? मुझे आप दीक्षा दे दो, अपना शिष्य बना लो”। तब बाबा बोले “मैं तो दीक्षा देने ही आया हूँ, तू मेरा शिष्य ही है। तुझे जीवन भर अपनाना है मुझे, लेकिन तेरे मन में विश्वास नहीं था तो विश्वास दिलाना आवश्यक था, उस शाश्वत रिश्ते की पुनः स्मृति दिलाना था जो तू भूल गया था”। पत्तेवाले बाबा ने बचपन में जो दिमाग उलट दिया था बाबा देवीशंकरजी ने एक रात में उसे पुनः ठीक राह पर ला दिया था। सुबह हो चली थी, दशहरे का दिन था, जब गुरु शिष्य का यह मिलन हुआ तो शारदीय नवरात्र की दुर्गानवमीं थी। दशहरे के दिन सुबह बाबा देवीशंकर युवा हरिविलास को भोपाल के लाल गुफा मंदिर ले गये और गुरु दीक्षा दी। उस दिन १९ अक्टूबर १९६१, गुरूवार का दिवस था। हरिविलास बोले “बाबा आज से आप ही मेरे सर्वस्व हो, मैं जीवन में सिर्फ गुरु को ही मानूंगा, मेरे लिये सिवा गुरु के दुनिया में कुछ भी नहीं है”। अगर गुरुदेव बोल दें तो क्षण भर में प्राण भी दे दें, वे अपने गुरुदेव के प्रति पूर्ण समर्पित थे। बाबा देवीशंकर चट्टोपाध्याय ने उनको अपना

सबसे प्रिय शिष्य बनाया। करीब १० वर्षों तक उन्हें अध्यात्म के रहस्य समझाए। गुरुदेव खूब पढ़ते थे। बाबा तो भिक्षावृत्ति ही करते थे। गुरुदेव काम धंधे की तलाश में इंदौर आ गये थे।

बाबा अव्यक्त हो गए

गुरुदेव देवीशंकरजी ने एक बार सूचना दी "तुम आबू आ जाओ। राजस्थान में माउंट आबू है वहाँ पर एक आधार माता का मंदिर है, मैं यहाँ पर ठहरा हूँ", चिट्ठी आई कि तुम यहाँ पर आ जाओ। और भी उनके कुछ शिष्य थे, सबको यह सूचना दी गयी और वे सब माउंट आबू आ गये। उन्होंने सब शिष्यों को कहा कि अब जेष्ठ पूर्णिमा आने वाली है, उस दिन दोपहर को ठीक १२ बजे अभिजीत मुहूर्त में मैं अपना शरीर त्याग करूँगा। सब एक दूसरे का मुंह देखने लगे। गुरुदेव शरीर कैसे त्याग करेंगे? मजबूत स्वस्थ शरीर है। बाबा बोले तुम सब कुछ दिन यहीं रुको । पूर्णिमा को सात दिन बाकी थे, दिनभर सत्संग चलता था, वहीं पर सब खाना बनाते थे, खाना खाते थे, सुबह सुबह स्नान करते थे, और बैठ जाते थे सत्संग में। लगातार हफ्ते भर तक रोज सत्संग हुआ और पूर्णिमा का दिन आ गया। सुबह सब लोगों ने स्नान किया और सत्संग के लिये बैठ गये। बाबा बोले "याद है ना आज पूर्णिमा है, ठीक १२ बजे मैं अपना शरीर छोडूँगा"। बाबा कैसे शरीर छोड़ेंगे? सबके मन में प्रश्न उठा। बाबा सब का मन जान गये थे बोले "शरीर तो छूट जाएगा, मेरे शरीर का अब कोई काम नहीं रह गया" उन्होंने बोला "इस शरीर का अब उपयोग हो गया, मुझे जो एक पौधा लगाना था, लगा दिया। अब तुम कुछ भी पूछना चाहो तो पूछ लो"। सब लोगों ने कहा कि हमें तो समझ में नहीं आ रहा है। अब इतनी सी देर रह गयी, हम क्या पूछें? आपको जो कहना है आप ही कह दो, मेरे गुरुदेव भी पास में ही बैठे थे, उनके माथे पर हाथ रखा, "देखो इसके रूप में मैं तुम्हारे साथ सदा रहूँगा। जब मेरा शरीर न रहे तो ऐसा मत समझना कि बाबा चले गये, यह बैठा है ना, सदा

समझना कि यही बाबा है" ऐसा कह कर बाबा ने अंतिम बार अपने लाडले शिष्य की ओर देखा। मध्याह्न ठीक १२ बजे बाबा ने ॐ का उच्चारण किया और उनकी देह गिर गयी। उसके बाद सब शिष्यों ने उनके पार्थिव शरीर का दाह संस्कार किया और आबू से चले गये। बाबा गुरुदेव को कहते थे "बेटा देखो मैंने अपने जीवन में कोई आश्रम नहीं बनाया, यह शरीर ही मेरा चलता फिरता आश्रम है, मैंने केवल भिक्षावृत्ति की, आश्रम बनाने की मेरी कोई इच्छा नहीं थी"। लेकिन वे कहते थे कि "एक काश्मीर शैव दर्शन है, जिसको मैं सर्वोच्च ज्ञान मानता हूँ, काश्मीर शैव दर्शन ही सर्वोच्च ज्ञान है। तुम किसी एक शिष्य को यह जिम्मेदारी देना कि काश्मीर शैव दर्शन को समझे और लोगों को समझाये"। बाबा महान योगी थे, स्वयं की इच्छा से चले गये। बाबा का जीवन विलक्षण था, उनके विचार मौलिक थे। वे जिस स्तर पर थे वहाँ वे शास्त्रों में भी व्यवस्था देने की क्षमता और अधिकार रखते थे।

द्वितीय कथा

गुरुदेव हरिविलासजी आसोपा "आपसा" का "चीना" से मिलन

हमारी मुलाकात कैसे हुई यह बता दें, क्या हुआ कि कुछ लोगों ने बताया कि पितरों का तर्पण करना चाहिये। कुरुक्षेत्र में पीहोवा एक जगह है वहाँ चले जाओ। कुछ रिश्तेदारों, कुछ परिचितों और कुछ अपरिचितों के साथ मैं और मेरी पत्नी वहाँ गये, कई लोग थे साथ में, एक समूह था, और वहाँ जाने के बाद हमने पितरों का तर्पण किया, भागवत पुराण का पाठ किया। मैं जब पिहोवा में था तब अपने आप में एक बहुत बड़ा आतंरिक बदलाव सा अनुभव कर रहा था। वहां कुछ कर्मकांड भी हो रहा था लेकिन मेरे भीतर किसी अंतर्याग की सृष्टि हो रही थी, मानो गुरुमिलन की पूर्वपीठिका थी। वापस लौटने पर इंदौर आये। जो हम को साथ लेकर गये थे, इंदौर के श्री मनस्वीजी थे, उन्हें यात्रा के कुछ फोटो

दिखाने थे, जिस बात का कोई पारमार्थिक महत्त्व नहीं था, वह तो बस परमेश्वर का एक रास्ता था गुरुदेव से मिलाने का। मैं और मेरी पत्नी उनके कार्यालय गये। वे वहाँ पर नहीं थे, उनके ऑफिस में हम बैठ गये ताकि अगर आएंगे थोड़ी देर में तो ठीक है, संध्या के ६ बज रहे थे, ८ बजे मेरी वापस मनावर, जहाँ मैं रहता था, जाने की बस थी। बस से जाना था घर, सोचा अगर आधे घंटे में आ गये तो उनसे मिलेंगे नहीं तो चले जायेंगे। वहीं पर बाहर से टहलते हुए एक वृद्ध सज्जन हमारे सामने आ कर बैठ गये, मैंने उन पर विशेष ध्यान नहीं दिया, वे बोले "आप इंतजार कर रहे हो, मैं भी इंतजार कर रहा हूँ"। उन्होंने हमें बातों में लगा दिया, थोड़ी देर तक "कौन हो, क्या नाम है, कहाँ रहते हो" ऐसी बातें होती रहीं, मैं उनकी आँखों में आँखें डाल कर बैठा रहा और वे मेरी आँखों में आँखें डाल कर बैठे रहे। बातचीत चलती रही, कुछ संसार की बातें, कुछ शेयर मार्केट, ट्रैफिक की बातें और अंत में कृष्णगीता पर, भागवत पर बातें करने लगे, वे बोल रहे थे और हम दोनों सुन रहे थे। कहने लगे "मेरे गुरुदेव किसी एक शिष्य को कार्तिक मास में शांकरभाष्य गीता सुनाना चाहते हैं, शायद तुम सुन सको"। मुझे ऐसा लगाता है कि मैं किसी सम्मोहन में चला गया था, समय कुछ भी मालूम नहीं पड़ा कि कैसे बात करते करते जब होश आया, ८ बजे की बस पकड़नी थी, मैंने घड़ी देखी तो रात के १२ बज गये थे। उस दिन शारदीय नवरात्र की नवमी थी, अगली सुबह दशहरा था। इस बीच में मनस्वीजी भी आकर बैठ गये थे पर मुझे कुछ भी याद नहीं कि वे कब आये। कैसे बीत गये ६ घंटे पता ही नहीं लगा। वे मुस्कुराने लगे बोले क्या हुआ, मैंने कहा घर जाना था ८ बजे की बस से, बोले टैक्सी की व्यवस्था कर दें? मैंने कहा कर दो, तो उन्होंने कोई सज्जन टैक्सी वाला था, उसे फोन लगाया, टैक्सी वाले ने तो इतनी रात को जाने से मना कर दिया। मैंने कहा चलो अब ठीक है कल जायेंगे। इंदौर में मेरा एक फ्लैट है, वहां हमने रात बिताई, फिर दूसरे दिन घर पहुँचे।

गुरु शिष्य मिलन कथा

दीक्षा

घर पर कुछ दिनों के बाद एक चिट्ठी आई कि “मेरा नाम हरिविलास है, लोग मुझे गुरुजी कहते हैं, तुम मुझे प्यार से आपसा कह सकते हो, मैं एक बार तुम्हारे घर आना चाहता हूँ” मैंने तुरंत जवाब भेज दिया “आइये, आप जब चाहे आ सकते हैं”। वे अपनी पत्नी के साथ कार्तिक पूर्णिमा की पूर्व संध्या को मेरे घर आये। रात को भोजन किया, उनके लिये एक कमरे की व्यवस्था कर दी थी। रात को ज्यादा बातचीत नहीं हुई। सुबह जल्दी उठ कर स्नान किया क्योंकि मुझे तो क्लीनिक पर जाना होता था। महेश्वर, जहाँ मैं आज हूँ, यहाँ से करीब ६५ किलोमीटर दूरी पर मनावर है, मध्यप्रदेश के धार जिले में, यह वहाँ की बात है। सुबह मैं और मेरी पत्नी इनके पास आकर बैठ गये फिर मैं इनकी तरफ देखता रहा वे भी मुस्कुराते रहे। किसी अज्ञात प्रेरणावश मैं बोला “क्या आप मुझे दीक्षा देंगे?” तो बोले “दीक्षा ही तो देने आया हूँ, और तो कुछ काम नहीं है मुझे” “इसी वक्त, इससे अच्छा कोई मुहूर्त नहीं है” उन्होंने बोला “एक जल पात्र लेकर आओ” जल पात्र और कुछ फूल भी हम दोनों लाए, उन्होंने मुझे उसी समय दीक्षा दी, गुरुमंत्र दिया, माताजी ने मेरी पत्नी को दीक्षा दी। उस दिन कार्तिक पूर्णिमा थी, दीक्षा के बाद मैं ‘चिदानंद’ हो गया और वे मुझे प्यार से ‘चीना’ कहने लगे। उन्होंने बिना एक मिनट की देरी के कहा “वह मेरा बैग लेकर आओ” उसमें शांकरभाष्य उपनिषद की ११ पुस्तकें थीं, इन पुस्तकों को मेरे हाथों में सौंप कर बोले “इनको पढ़ो” बोले “मैं जानता हूँ तुम इनको पढ़ सकते हो”। “मैं अगली बार आऊँगा शांकरभाष्य गीता भी लाऊंगा”। फिर उनका आने-जाने का सिलसिला आरम्भ हो गया। वे मनावर आते थे करीब १५-२० दिन रुकते थे, फिर १५-२० दिन इंदौर जाते, फिर वापस आ जाते। वे एक गृहस्थ संत थे, इंदौर में उनका निवास था, परिवार में पूज्य पुष्पामाताजी, पुत्र अरविन्द, पुत्रवधू सौ. उत्सविका और पोता राज थे। उनका वहाँ पर एक छोटा सा

गुरुपरिवार भी था। १९९९ में गुरुदेव ने दीक्षा दी, २००७ तक वे लगातार मनावर आते रहे। उनसे मेरा बहुत जीवंत संपर्क रहा। दीक्षा उपरांत के ८ वर्षों में २००७ तक वे ८४० दिन मेरे घर रुके, यह गिनती उन्होंने ही की थी, वे डायरी में लिखते थे कि मैं मोहन के यहाँ इतने दिन रुका। हम संध्या भोजनोपरांत सत्संग करते थे। दिन भर मैं अपना चिकित्सकीय व्यवसाय करता था, वे तब तक पुस्तकें पढ़ते थे और रात के करीब ८ बजे के बाद हमारा सत्संग शुरू हो जाता था। कभी रात को १२ बजे तक होता था, कभी रात के २ बजे तक कभी ३ और कभी तो सुबह हो जाती थी! उन्हें नींद बहुत कम आती थी। उन्होंने जीवन का सारा सार, सारा प्रेम उंढेल दिया था, इतने प्रेम की मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था। मैंने अपने जीवन की अच्छी और सारी बुरी बातें भी उनके सामने रख दी थी, मैं कहता था "मैं इतना अच्छा नहीं हूँ" बोलते थे "मैं सब जानता हूँ"। जब उन्होंने भी अपने जीवन की किताब के सारे पन्ने मेरे सामने खोल कर रख दिए तो यह मेरे लिए अविश्वसनीय था, अब हम मानसिक रूप से अभिन्न होते जा रहे थे। गुरु का यह रूप मेरी सुन्दरतम कल्पनाओं से भी सुन्दर था। उन्होंने अध्यात्म की दृष्टि दी, मेरे जीवन की गलतियों और असावधानियों के प्रति भी मुझे जागरूक किया। बाबा ने एक बार कार्तिक मास में शांकरभाष्य गीता पढ़ कर सुनायी। फिर २००६ में एक दिन मुझे इंदौर बुलाया और बोला "देख मैं जितना तुझे उपनिषद बता सकता था, पढ़ा सकता था, पढ़ा दिया, अब आगे के जीवन में काश्मीर शैवदर्शन समझना भी है और समझाना भी है"। मैंने बोला "काश्मीर शैवदर्शन तो कुछ जानता नहीं" बोले "इसीलिये तो तुझे उपनिषद पढ़ाया, उपनिषद के बाद ही अद्वैत शैव दर्शन समझ में आयेगा। यह अन्य लोगों को भी समझाना है, यही ज्ञान का शिखर है"। मैंने कहा "आप जैसा कहेंगे मैं करने के लिये राजी हूँ"। उन्होंने पुस्तकों की सूचि बनाई। प्रत्यभिज्ञाहृदय, तंत्रालोक, विज्ञानभैरव, शिवसूत्र, तंत्रसार, पराप्रवेशिका, स्पंदकारिका, ईश्वरप्रत्यभिज्ञा, परात्रिशिका,

परमार्थसार, सारी लिस्ट बना दी। बोले यहाँ तो कुछ मिलेगी नहीं, कुछ दिल्ली से बुलाई कुछ वाराणसी से मंगाई ऐसा करके पुस्तकें एकत्रित हो गयीं।

अपना गाँव छोड़ दो

गुरुदेव ने एक दिन कहा कि तुझे काश्मीर शैवदर्शन के काम के लिये अपना गाँव छोड़ देना चाहिये। यह फ़रवरी २००७ की बात है। मनावर में मेरा अपना मकान था, मेडिकल प्रैक्टिस थी और साथ बुजुर्ग माता पिता थे। मैंने पूछा कहाँ जाऊँ? बोले या तो इंदौर आ जाओ अथवा उज्जैन या महेश्वर चले जाओ। मैं तुरंत बोला मैं महेश्वर चला जाऊँगा। अब महेश्वर जाना है तो बोले जाओ जमीन देखो। मैं दूसरे दिन २५ फ़रवरी २००७ कि महेश्वर आया। मेरे साथ मेरे मित्र श्री राजेंद्र पाटीदार थे। महेश्वर में सबसे पहले श्री रघुराज पाटीदार से परिचय हुआ। मैं बस से उतरा तो सामने इनकी पैथोलॉजी लेबोरेटरी थी, राजेंद्र एवं रघुराज पूर्व परिचित थे । इनसे पूछा कि क्या आसपास कोई कॉलोनी वगैरह है? उन्होंने एक सेठ का नाम बताया, कहा उनसे मिलो उनके पास बहुत सी कॉलोनी और जमीनें हैं। मैंने कहा "कोई ऐसी नयी कॉलोनी हो जहाँ काफी जगह हो", तो फिर रघुभाई ने कहा "हाँ एक पंचवटी कॉलोनी है जो नयी विकसित हो रही है", वे मुझे कॉलोनी तक छोड़ने आये। रघु भाई आज विश्वात्मा न्यास के न्यासी भी हैं। उन्होंने हमें पंचवटी कॉलोनी तक छोड़ा। संयोग बेहद सुन्दर थे, गुरु कृपा का साक्षात् दर्शन हो रहा था। हम दोनों यहाँ पर आये तो बहादुर नाम के चौकीदार से मुलाक़ात हुई, उससे पूछा "किसकी कॉलोनी है"? उसने कहा "देखो आपके पीछे सेठ आ रहे हैं" । श्री जीतेन्द्र गुजराती, जो कॉलोनी के स्वामी थे, पीछे पीछे आ रहे थे। उनकी कार रुकी, मैंने कहा मुझे कुछ जगह मकान बनाने के लिये चाहिये, उनसे उपलब्ध जगह की जानकारी माँगी, मुश्किल से दस मिनट में मुझे एवं राजेंद्र को एक जगह पसंद आ गयी। जेब में थोड़ा सा पैसा लाया था वह उनको दिया, श्री गुजराती हम दोनों को उनके घर ले गये, चाय पिलायी। पूछा

गुरु शिष्य मिलन कथा

“रजिस्ट्री कब करोगे”? मैंने बोला “एक हफ्ते के बाद”। फिर हम घर लौट आये। अगले हफ्ते आकर रजिस्ट्री भी करवा ली, और उसी दिन खरगोन जा कर इंजीनियर श्री जे पी राठौर से मिला। उनसे तुरंत मकान का नक्शा बनाने का आग्रह किया। करीब २ महीने बाद २७ अप्रैल २००७ से मैंने अपना निवास बनाना शुरू कर दिया। इस बीच गुरुदेव ने बोला कि शैव दर्शन के कार्य के लिये एक ट्रस्ट बनाओ। कुछ मित्रों को साथ ले कर एक ट्रस्ट बनाया, गुरुदेव ने नाम दिया “विश्वात्मा न्यास”। ट्रस्ट का पंजीयन करवाया, फिर उस ट्रस्ट को कुछ गुरुभाइयों और अन्य लोगों ने धन तथा भूदान दिया। पंचवटी कॉलोनी में ही ‘विश्वात्मा न्यास’ के अंतर्गत आश्रम के लिये जमीन खरीदी।

माँ प्रभादेवीजी से आशीर्वाद

मेरे निवास का निर्माण कार्य चल रहा था, इस बीच काश्मीर शैव दर्शन की पुस्तकों को पढ़ने का मैंने प्रयास किया, गुरुदेव को बोला “ये पुस्तकें बहुत कम समझ में आ रही हैं, ठीक से समझ में नहीं आतीं”। गुरुदेव बोले “तुम माँ प्रभादेवीजी के पास जाओ जो लक्ष्मणजू महाराज की शिष्या हैं” और बोले “तुम्हारा सौभाग्य है कि वे अभी भी है संसार में, इसलिये तुम उनसे संपर्क करो”। उनको मैंने ईश्वर आश्रम श्रीनगर पत्र लिखा, उनका जवाब आया “अगर तुम्हें कोई जिज्ञासा है तो तुम आ जाओ”, उन्होंने लिखा “मैं अप्रैल माह (२००८) दिल्ली में रहूंगी, तुम दिल्ली आ जाओ”। दिल्ली में उनके भतीजे हैं पद्मश्री सुधीरजी सोपोरी जो बाद में जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय के उपकुलपति हो गये थे। उस समय उनके पास बुलाया, फरीदाबाद में है उनका घर। वहाँ गया, श्री सुधीर जी सोपोरी तथा श्रीमती मीना भाभी अतीव स्नेही है, इनका स्नेह आज भी मुझे सदैव मिलता है। मैं संकोचवश किसी होटल में ठहरना चाहता था लेकिन माँ ने अपने साथ ही रहने की आज्ञा दी। चार दिनों तक हम याने मैं और मेरे एक गुरुभाई मोतीलाल परिहार, जिनका अब स्वर्गवास

हो चुका है, उनके साथ रहे। चार दिनों में माँ ने काश्मीर शैवदर्शन के गूढ़ रहस्य बताये, अद्वैत शैवदर्शन खूबियाँ बतलायी, उनकी हस्तलिखित डायरियां बतलायी। उनके गुरुदेव के प्रवचनों के नोट्स जो उन्होंने बनाये थे, बतलाये। उनके कृपाप्रसाद से एक दृष्टि विकसित हो गयी। जब माँ प्रभादेवीजी को ट्रस्ट तथा भावी आश्रम की योजना के बारे में बताया तो उन्होंने आश्रम का नामकरण कर दिया "हरिहर त्रिक आश्रम" उसके बाद उन्होंने मुझे बोला "कुछ भी समस्या हो तुम फोन पर बात कर सकते हो"। फोन पर तो आज तक उनसे संपर्क है। माँ बहुत वृद्ध हैं, १९२४ का जन्म है उनका। जुलाई २००८ में मै सपरिवार महेश्वर आ गया और अपना चिकित्सकीय व्यवसाय धीमे धीमे व्यवस्थित करने लगा।

हरिहर त्रिक आश्रम का आरम्भ

३० जनवरी २००९ से हरिहर त्रिक आश्रम के भवन का निर्माण शुरू हो गया। तब ट्रस्ट के अकाउंट में हमारे पास मात्र एक लाख रुपये थे। जब भवन बनना शुरू हो गया तब कोई भी आकर धन दे जाता था। दिल्ली से श्री सुधीर जी सोपोरी ने भी आर्थिक मदद की। ऐसा करते करते आश्रम का भवन तैयार हो गया। गुरुदेव अपने प्रवचनों में जिन पुस्तकों के नाम बोलते थे मैं नोट कर लेता था, और वह पुस्तक बुला लेता था। इस तरह से करीब ४००० पुस्तकों की लाइब्रेरी भी बन गयी। कई पुस्तकें अन्य अन्य लोगों ने दीं। जब यह भवन तैयार हो गया तब गुरुदेव ने आकर १० जनवरी २०१० को हरिहर त्रिक आश्रम में दीप जलाया। मैंने उनको कहा कि मुझमें इतनी योग्यता नहीं है कि मैं शैव दर्शन पर बोलूँ और लोगों को बताऊँ, तो बोले "बाबा ने जब तुमको इस काम के लिये चुना है, तो योग्यता भी वे ही देंगे। तुमको कुछ सोचना नहीं है, तुमको तो अपना काम शुरू करना है"। भले ही सामने एक आदमी बैठा है तो एक आदमी को सुनाओ, दस आते हैं तो दस को सुनाओ, पर तुमको किसी भी तरह से हताश नहीं होना है। उन्होंने मेरा माथा चूम कर आशीष दिया और सीने से लगा लिया।

गुरु शिष्य मिलन कथा

उसी महीने जनवरी २०१० से यहाँ काश्मीर शैव दर्शन पर साप्ताहिक कार्यक्रम की शुरूआत हो गयी। जो दो चार परिचित थे प्रति गुरुवार को आने लगे। धीरे-धीरे और लोग जुड़ते गये। बहुत सारे आये, कई चले गये, कई नये लोग आये, ऐसा चलता रहा। मार्च २०११ में माँ प्रभादेवीजी तथा श्रीमती मीनाजी सोपोरी महेश्वर आये और चार दिवस आश्रम में रुके, तब आश्रम में उत्सव सा मंजर था। गुरुदेव के आशीर्वाद से कार्यक्रम निर्बाध चल रहा है। सन २०१२ में उड़ियाबाबा के आश्रम से गुरुदेव अखंडानंदजी सरस्वती की शिष्या माँ पूर्णप्रज्ञा देवीजी अपनी दो शिष्याओं के साथ महेश्वर पधारीं, आश्रम की जानकारी मिलने पर मुझे मिलने बुलाया। कुछ सप्ताह तक उनकी शिष्याएँ गुरुवार की सभा में आने लगीं। उन्होंने व्याख्यान के नोट्स माँ को दिखाये। माँ पूर्णप्रज्ञादेवीजी ने सुझाव दिया कि आश्रम के व्याख्यानों को रिकॉर्ड किया जाना चाहिये, ये अमूल्य निधि हैं। तभी से आश्रम के व्याख्यान रिकॉर्ड किये जाने लगे। १८ अक्टूबर २०१७ को गुरुदेव ने शरीर त्याग दिया, १७ दिनों बाद ४ नवम्बर २०१७ को माँ पुष्पा आसोपा ने भी अपने पतिदेव का अनुसरण कर शरीर त्याग दिया। मेरे जिम्मे गुरुदेव जो काम देकर गये, प्रतिबद्धता से कर रहा हूँ। गुरुजी ने बोला था "तुमको इस तरीके से बताना है की जनता को समझ में आये, साहित्यिक भाषा में बात करना जरूरी नहीं है, जरूरी है बहुत सहज भाषा में बात करो, बोलचाल की भाषा में बात करो, ताकि श्रोता को उसका रहस्य समझ में आये" शैव दर्शन का दृष्टिकोण क्या है? यह समझ में आना चाहिये। वह बात ध्यान में रखते हुए यह कार्यक्रम शुरू हुआ और आज तक चल रहा है। मैं लोगों को अपनी बात वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझाता रहा, और कहता रहा हूँ कि मेरी बात को अपने विवेक से समझना, जो तुम्हें ठीक लगे उसको स्वीकार करना, जो तुम्हें लगे कि ठीक नहीं है तो अस्वीकार करना। मेरे गुरुदेव जरूर आपको आशीर्वाद देंगे क्योंकि जीवन मुक्ति की जिस प्रबल इच्छा को लेकर आये हो, वह जरूर पूरी करेंगे। मैं उनके रहस्य और उनकी क्षमताओं को जानता

गुरु शिष्य मिलन कथा

हूँ, उनकी क्षमता बड़ी विचित्र और बहुत विशाल है। दोनों की कथा मैंने आपको बताई, अपने बाबा की भी और गुरुदेव की भी और वे कैसे मिले। मैंने कभी जीवन में बाबा देविशंकरजी को नहीं देखा लेकिन बरसों तक बाबा मुझसे एवं मेरी पत्नी से रहस्यमय विधि से संपर्क करते रहे। अंततः एक दिन, मेरे महेश्वर आने के कुछ माह बाद मुझे सन्देश मिला "मैंने एक बगिया लगा दी है, इस बगीचे की देखरेख करो, अब मैं जा रहा हूँ"। इसके बाद फिर कभी बाबा से बात नहीं हुई। फिर जब एक दिन गुरुदेव से मुलाकात हुई तो उन्होंने बताया "अब तक बाबा बिना शरीर के हमारे साथ थे, लेकिन अब वे ब्रह्मलीन हो गये हैं, अब वह तुमसे कभी बात नहीं करेंगे, ना मुझसे करेंगे, सदा के लिये चले गये"। तो यह मेरे बाबा का चित्र है। यह मूल चित्र है बाबा देवीशंकर चट्टोपाध्याय का जो मेरे गुरुदेव के गुरुदेव हैं, और यह मेरे गुरुदेव है जिनसे मैंने दीक्षा ली। ये लक्ष्मणजू महाराज हैं वे भी १९९३ में इस संसार से चले गये। इन्होंने काश्मीर शैव दर्शन को पुनर्जीवित किया है, ५० बरसों तक उन्होंने इस पर काम किया। यह प्रभा देवी माताजी हैं, इस आश्रम में आई थीं और यहाँ पर ४ दिन ठहरी थीं, ये लक्ष्मणजू महाराज की शिष्या हैं, यह फोटो यहीं का है। यह चित्र उनकी बड़ी बहन शारिका माताजी का है। उन्होंने गुरुदेव लक्ष्मणजू महाराज से भी पहले शरीर छोड़ दिया था। वे जीवन पर्यंत ईश्वरस्वरुप लक्ष्मणजू महाराज के सान्निध्य में रहीं। और यह चित्र है तब का जब मैं प्रभादेवी माताजी को मिलने फरीदाबाद गया था, मेरे साथ मेरे गुरुभाई गये थे मोतीलालजी परिहार जो अब इस दुनिया में नहीं हैं, यह तब, अप्रेल २००८, का चित्र है। गुरु नारायण-----

सदगुरुदेव की जय

करुणावतार की जय

सखीसरकार की जय

****

गुरु शिष्य मिलन कथा

गुरुदेव ने सात वर्षों तक अनगिनत पत्र लिखे। जब भी वे इंदौर में होते थे तो प्रतिदिन पत्र लिखते थे, कभी कभी तो एक ही दिन में उनके दो – तीन पत्र प्राप्त हो जाते थे। दीक्षा के बाद एक पत्र जो मुझे मिला वह मेरे जीवन का विशिष्ट मुकाम बन गया, पहली बार मुझे इतने आक्रामक रूप से स्वीकारा गया था। पत्र में शब्द नहीं, कविता नहीं शुद्ध रूप से उनका हृदय था, उनका दर्द था। बरसों तक इसे सीने से लगाये हूँ, यह मेरे लिये प्रेरणा का अखूट स्रोत है। आँसू जो सूख चुके थे फिर से बह निकले। आप सब के साथ यह चिट्ठी साझा कर रहा हूँ, इसके लिये मुझे बहुत साहस समेटना पड़ा... खुशियाँ हम सहज में बाँट लेते हैं, किसी विश्वासपात्र के साथ दु:ख भी बाँट लेते हैं.. लेकिन इस दिव्य प्रेम को कैसे साझा करूँ? प्रेम के इस बोझ को सीने में छिपा कर मरना भी तो नहीं चाहता.. बहुत संकोच के साथ अंतरात्मा में स्थित गुरुदेव से अनुमति ले कर यह दिव्य प्रकाश उजागर कर रहा हूँ।

'चीना'

गुरु शिष्य मिलन कथा

तुम और मैं

मैं और तुम

एक बात - निष्ठा की।

श्रद्धा का पात्र ही

हो सकता है – श्रद्धावान।

अकीदत क्या है?

क्या जानेगा वहम का पुतला।

बेगुमानी देती है

एतबार

एतबार से जन्मता प्यार

तुम श्रद्धालु हो

इसीलिये हो श्रद्धास्पद

मतानुगामिता

ही एक दिन

ढलती है पेशवाई में

रहनुमाई में

तुमने श्रद्धा सौंपी

किस मनोभाव को

किस अभिव्यक्ति को

कहाँ से लाऊँ?

तुम्हारी श्रद्धा है

तो प्रति पल है

मेरी स्मरणा।

तुम्हारी सुधि

सौंप दी मैंने मेरी प्रज्ञा

आशीर्वाद में।

हाल क्या है तेरे दिल का

यह तो बस मुझे पता है

हाल क्या है मेरे दिल का

यह तो बस तुझे पता है

श्रद्धावान और श्रद्धेय

का भेद मिट गया।

यही अद्वैत है।

अद्वैत है यही।

चीना

तुम अनुभूति हो

गुरु शिष्य मिलन कथा

विलक्षण।

मैंने देखा नहीं विश्व।

विश्व देखा है कन्हाई ने।

कन्हाई जिधर देखे

चीना

तुम वही हो

विलक्षण अनुभूति से।

कुछ ठहरता नहीं

तुम्हारी खूबसूरती के आगे

तुम्हारी मधुरता के आगे

कायम हो नहीं सकती

चीना

तुम्हारी मिसाल।

तुम हो एक –

सुकोमल भाव साकार

निछावर करने को

प्यार – कम पड़ता है।

विश्व में जो कुछ

सुना जाता है

कहा जाता है

लिखा जाता है

पढ़ा जाता है

इस जगत के आदि से –

कहें – अनादि से

सदियों से

सहस्राब्दियों से

वह सिर्फ तुम हो।

तुम से प्रथक

कुछ और नहीं।

वही है सौभाग्यवान

जो भूल नहीं करे

तुम्हारी

मधुरता समझने में

तुम एक मधुर अनुभूति।

तुम एक मीठे अहसास

तुम्हारी हो नहीं सकती

गुरु शिष्य मिलन कथा

कभी भी, कोई भी

तात्विक विवेचना।

मैंने अवसरवादी

देखे हैं।

पलट जाते लोग।

बदले हुए लोग।

धोखा देते लोग।

धूल झोंकते लोग।

विश्वास हन्ता लोग।

बेवफा लोग।

मैंने नहीं पहुँचाई क्षति

तो भी पाई चोट।

तुम ढकोसलों से दूर

आडम्बर से दूर

क्योंकि मधुर अनुभूति हो

कोई भी मन जिसे मिले तुम्हारी आड़

वह पा जाए भक्ति

वफ़ा और मुरव्वत

श्रद्धा और शील

भरोसा और जाँनिसारी

न छलना संभव

न छला जाना संभव।

मानने की बात नहीं

कहने की बात नहीं

शब्दों की जरुरत नहीं

भीतर और बाहर

तुम्हारा

ईश्वरीय स्वरूप।

साक्षात् स्वर्ग है

धरती पर

तुम्हारा हृदय।

स्वर्ग देखना हो जिसे

देख ले

मनावर की धरती पर

तुम्हारा हृदय

गुरु शिष्य मिलन कथा

उपनिषद् सा हृदय।

उपनिषद् की सच्चाइयाँ

समझ में आती हैं

तुम ब्रह्म हो

ब्रह्म – तुम्हारे में

बसता है।

तुम निराकार ब्रह्म

की साकार प्रतिमा।

उपनिषद् के

प्राणवान शब्दों की

सिर्फ तुम प्रतिमा हो।

छलकती हुई गुणराशि

देखी “कमल” ने

बेचैन है द्वारकाधीश

देखने को

छलकता कल्याण गुण

हाँ – तुम्हारी आत्मा

जो बसती है रूपायतन में

उसने देखा है

दैवीय प्रकृति का

जीवंत - सार

तुम में। तुम्हारे में

तुम और विश्व का

अद्वैत।

तुम्हारी सत्ता का

न हो सकता है आदान

न हो सकता है प्रदान

लोगों ने बीज रूप में -

मेरे को खोजा

फिर बो दिया।

शोर हो गया मैं एक

उपवन

फिर मैं इतना ही अंकुरित हुआ

कि “फल” दे न सका।

सींचा ही नहीं गया।

मेरे गुरुदेव का

गुरु शिष्य मिलन कथा

बीज था मेरा अस्तित्व

आदान की कभी नहीं रही

आकांक्षा।

आकांक्षा रही ही नहीं

आदान की।

बीज की भावनात्मक

प्रवृत्ति तो

प्रदान है

अतिशय कोमल प्राणवान

दैवी सम्बन्ध की।

उजाड़ दिए अंकुर

सांसारिक संबंधों के

संबोधनों से।

अंकुरित हो जाता

अंकुरित हो पाता

अतिशय कोमल

दैवी सम्बन्ध

तो एकसाथ

घटित होता

समग्र अस्तित्व।

हो जाता

महकता उपवन

समग्र अस्तित्व।

सारी सत्ता से

प्रस्फुटित होती सुगंध

मुस्कराता

उत्तुंग शिखर

उत्फुल्लता का।

आभास हुआ होगा

उत्फुल्लता का

कि कमल का सरोवर

तोड़ अपनी सीमायें

बहता चला आया

मनावर।

तुम्हारा गहरा और

भीगा मौन

गुरु शिष्य मिलन कथा

छू गया इतना
छू गया कितना
कि कमल "प्रेमाश्रु"
बहाकर रो दिया।
तुम्हारी समीपता
का आकांक्षी होगया
'कमल'।
उपनिषद् हो तुम।
ऋचा भी हो तुम।
उपनिषद् के प्रेमी
उपनिषद् के प्यासे
सच्चे प्रेमी
सच्चे प्यासे
स्वस्थ सज्जन
सुन्दर सज्जन
सद्व्यवहारी साधक
सद्गुणी साधक
सत्कर्मी साधक

पापहीन साधक
छलहीन साधक
कुलीन साधक
विवेकवान साधक
रणछोड़राय के नगर में
(डाकोर)
सुनेंगे शब्दब्रह्म
तुमसे
एकदिन।
विडाल व्रती
वक ध्यानी
बुढ़िया पुराणी
पोप लीला विहारी
कमण्डली
धर्मध्वजी
प्रपंची
ढोंगी, दम्भी, पाखण्डी
स्वतः नष्ट हो जाते हैं

गुरु शिष्य मिलन कथा

वे देख नहीं सकते
निष्ठापालनकर्ता का तेज
धर्मपरायण का तेज
उपनिषदाश्रयी का तेज।
शातिर टिकता नहीं
पापात्मा टिकता नहीं
बदनीयत टिकता नहीं
हरामी सदा हारता है
स्वयं हारता है दुराचारी
बहुत बड़ी बात है
प्रशंसा की मंशा से
दूर हो तुम
महाकुल की तरह
दिव्यता के आकांक्षी तुम
निर्निमेष दृष्टि
से देखते तुम्हारे
भोले नयन।
कोमल स्वीकारोक्तियों
का करती है
निवेदन
तुम्हारी रसवत्ता।
ऋतंभरा बुद्धि
के धनि साधक को
प्रिय लगता है
हर ऋतम्भर
मूल्यवान होता है
संग – सज्जन का।
अतिक्रम करने वाला
नियमोल्लंघक व्यक्ति -
व्यतिक्रमी व्यक्ति -
सब कुछ खो देता है
आत्मानुशासन कर्त्ता
संविहित जीने वाला
सब पा जाता है।
पारखी प्राप्त करता है
स्थायी सम्बन्ध।

गुरु शिष्य मिलन कथा

मूढ़ – सब खो देता है।
पारखी को उपलब्धि
के लिये सदैव
चेष्टा नहीं करनी पड़ती
गुरु वही जो हो पारखी
गुरु वह नहीं जो हो पाखण्डी
गुरु बसेरा
होता है सज्जन महल
सुरक्षित – आगार।
गुरु में होता है
संरक्षण - आवेग।
प्रबल संयम
और हित – तत्परता।
शिष्य को चोट लगे
तो गुरु को दर्द हो
शिष्य उदास हो
तो आँसू छलक जाये
गुरु की आँखों से।

गुरु की आँखों से
सुशिष्ट तृप्ति का
होता है आभास।
गणेश, दुर्गा, सूर्य, शिव
को अभिव्यक्ति दे
देता है गुरु
श्रीमद्भागवत महाग्रंथ में
गुरु के शब्दों से
ब्रह्म के किसी भी रूप का
होता है साक्षात्कार।
गुरु बोलता है
तो भागवत जन्मती है
गुरु करता है हर कार्य
पूर्ण सुविचारित
सच्चे - गुरु की दृष्टि
होती है – पारखी
गुरु अपनी समीपता को
अपने सत्संग को

गुरु शिष्य मिलन कथा

अपने मार्गदर्शन को

रूपायित करके

बना देता है

अनूठा उपहार।

गुरु वही करता है, जो हो महान

गुरु महान

गुरु जो देता है

वह होता है महान।

गुरु होता है महान

गुरु गहरा ज्ञानी होता है

गुरु का एक प्रतीक शब्द

समेटे रहता है

अपने भीतर

एक विराट अर्थ।

गुरु अपने आधीन

सत्संग में

करता है स्वीकार

देता है गहन शीतल

ज्ञान – परितोष।

स्वीकारना – शिष्यत्व

स्वीकृत होना – शिष्यत्व

गुरु भी अनुभव करता है

गुरुत्व का स्वीकार

गुरुत्व का स्वीकृत होना

स्वीकार में

स्वीकृत में

मोहक व तोषदायक

औपनिषदिक भाव।

गुरुवरण होता है

शिष्य की दीक्षा

गुरु दक्षिणा।

गुरु प्रदक्षिणा।

शिष्य – औपनिषदिक शिष्य

का एक ही निवेदन

हे नाथ

मेरी अनन्यता को

गुरु शिष्य मिलन कथा

कबूल करें

स्वीकारें और समझ लें।

शिष्य - कबूल हो जाता है

स्वीकारा जाता है

और समझा जाता है।

दो दिन का परिचय

गुरु की परखी आँखें

समझ लेती हैं।

दो दिन का परिचय

लगने लगता है

सौ दिन का परिचय।

चीना – तुम्हारा मार्ग

तो प्रशस्त था ही।

तुम्हारे पास है

अम्बार

आतंरिक सम्पदा का।

तुमने सहज पा लिया

शिष्यत्व के अस्तित्व का

ज्ञान।

गुरु को तुम्हारे

शिष्यत्व से होता

गुरु-अस्तित्व का ज्ञान।

कबूल हो जाना।

स्वीकारा जाना।

समझा जाना।

चीना

तुमने सौपी सूक्ष्मता।

और मैंने दे दी परिभाषा।

स्वतः स्फूर्त शिष्यत्व

दीक्षा के पूर्व ही हो गयी थी

संपन्न

उपनिषद् वर्णित स्वस्थितता

उपनिषद् - दीक्षा।

स्वाभिमान का चम्बल (Flood)

पाता है दीक्षा से।

मरने के बाद मुक्ति किसने

देखी है।

श्रद्धेय को पा जाना

श्रद्धालु हो जाना

विलक्षण दीक्षा

कि

शिष्य पा जाये

मनःस्ताप से मुक्ति।

धर्मपरायण के साथ

रहना हो जाये तीन घड़ी

तो होती है अनुभूति।

आघात पहुँचाने की

एक क्रिया घट जाये तो

समग्र अनुष्ठान हो जाता है

निष्फल – निष्प्राण।

आघात पहुँचाने की क्रिया

होती है ब्रह्मराक्षसी प्रवृत्ति

का द्योतक

गुरु - अन्धकार से प्रकाश

की ओर ले चलता है।

प्रकाश से अन्धकार की

ओर नहीं।

गुरु आश्रित नहीं होता

परक्रिया पर।

गुरु स्वाश्रयी होता है।

चाल चली जाये तो

अनुष्ठान लँगड़ाता है।

अपने नेतृत्व पर संशय

हो तो कारवाँ लुट जाता है।

स्वविवेक निर्भरता

और आत्म विकास

से सफल होते हैं

अनुष्ठान।

गुरु भूमिका निभाने की

सामर्थ्यहीनता से

अनुष्ठान होता है

निष्फल।

गुरु शिष्य मिलन कथा

गुरु को माया नहीं छूती

नहीं छूती उत्तेजना।

तीर्थ में दुविधा

मिटाती है लक्ष्य।

चीना

निश्चय ही

तुम समाधान हो।

जो बाहर से नहीं आया

तुम्हारे अन्तरतम में विराजमान

महाकुल से निकल कर

बाहर आया है।

अस्तित्व का विनाश

नही हो इसका

समाधान

समाधान

समाधान

तुम, तुम, तुम

तुम्हारे अंतरतम

में बैठे मेरे गुरु

की आज्ञा

मेरे सर मेरी आँखों में / पर

ईमानदार कोशिश होगी

अब स्थापित करने की

छलहीनता, प्रांजलता,

दयानतदारी, शुद्धाशयता

की।

न्याययुक्त, नैतिक, विहित

ऋत, धर्मयुक्त, सात्विक

पाकदिल धर्मक्रियाओं

के आयोजन की।

****



माँ शारिका देवीजी

गुरु शिष्य मिलन कथा

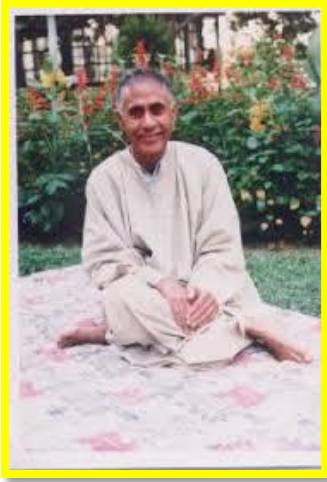


१. स्व. मोतीलाल जी परिहार, माँ प्रभादेवीजी, डॉ. मोहन लाल गुप्ता फरीदाबाद में २००८

२. आश्रम सत्संग हरिहर त्रिक आश्रम।



गुरु शिष्य मिलन कथा







१. ईश्वर स्वरुप लक्ष्मणजू महाराज २. हरिहर त्रिक आश्रम पादुकापूजन

३ हरिहर त्रिक आश्रम वाचनालय